P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* (Part-1) October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

आधुनिक भारतीय शिक्षा में भारत के असाधारण व्यक्तित्वों का योगदान (उन्नीसवीं शताब्दी का भारत)

कुमार प्रमोद
शोधार्थी,
इतिहास विभाग,
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय,
जोधपुर, राज.

सारांश

शिक्षा रूपी ज्ञान की ज्योति प्रत्येक राष्ट्र की रीढ़ सरीख होती है जो एक राष्ट्र के संचालन हेतु अति आवश्यक है। शिक्षा मानव में चेतना, निष्ठावादिता, कर्त्तव्यपरायणता और व्यवहार कुशलता की भावना पैदा करती है। उन्नीसवीं शताब्दी के भारत में अगर शिक्षा रूपी विकास की बात करें तो हम पाते है कि वर्तमान में जिस शिक्षा के बेखूबी दौर से हम गुजर रहे है उसके प्रारम्भ के पीछे अनेक असाधारण भारतीय व्यक्तित्वों का योगदान रहा है उनके द्वारा फैलाये गये शिक्षा रूपी ज्ञान ने भारतीयों को आत्म निरीक्षण करने के लिए विवश कर दिया। ऐसी बात नहीं है कि इस शिक्षा रूपी अस्त्र को चलाने में भारतीय व्यक्तित्व ही आगे आये, इसमें यूरोपीय विद्वानों की भूमिका भी रही है जैसे– विलियम जोंस द्वारा भारत में एशियाटिक सोसायटी की स्थापना, एनी बेसेण्ट की थियोसोफिकल सोसायटी आदि, लेकिन फिर भी भारतीय व्यक्तित्वों द्वारा भारत देश में फैलाई गयी शिक्षा यहां के लोगों को ज्यादा रूचिकर लगी क्योंकि ये यहां के लोगों की धार्मिक और सामाजिक भावना को ठेस पहुंचाये बिना सुधार करने में कामयाब रहे। इन असाधारण व्यक्तित्वों का मानना था कि शिक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए जो व्यक्ति के मस्तिष्क को बोझिल न करते हुए उसमें ऐसी रूचि और उत्साह उत्पन्न करें जो उसके जीवन निर्माण में सहायक सिद्ध हो। ये लोग भारत की प्रजा में शिक्षा के माध्यम से समता, एकता और बंधुता की भावना जागृत करना चाहते थे। इन महान भारतीय विभूतियों में राजा राममोहन राय, दयानन्द सरस्वती, विविदिशानन्द, मुंशीराम, डॉ. भीमराव अम्बेडकर, श्री अरविन्द, दादा भाई नौरोजी, सरदार पटेल, महादेव गोविन्द रानाडे, सुमन्त मुगलांवकर, रामनाथ गोयनका तथा न्यायमूर्ति मेहरचन्द प्रमुख रहे हैं।

मुख्य शब्द : असाधारण व्यक्तित्व, आत्म–निरीक्षण, प्रखर रूप, नवजागरण, अग्रदूत, पाश्चात्यकरण, स्वराज्य, अलख, मातृमान, 'पितृमानचार्यवान् पुरूषों वेद' तकबा, नैतिक शिक्षा, विचारक, शिक्षा दर्शन, सामर्थ्य।

प्रस्तावना

शिक्षा ज्ञान की वो ज्योति है जो एक राष्ट्र के लिए रीढ़ सरीख होती है यह ज्ञान की ज्योति न केवल ज्ञान के संरक्षण और संवर्द्धन का कार्य करती है, बल्कि उन योग्यताओं एवं क्षमताओं के निर्माण का दायित्व भी निभाती है, जो समाज के संचालन हेतु अति आवश्यक है, शिक्षा की ज्योति मानव में चेतना, निष्ठावादिता, कर्त्तव्यपरायणता, व्यवहार कुशलता और परोपकारिता की भावना पैदा करती है आज के भारत में शिक्षा प्रणाली बड़े व्यापक और विशाल पैमाने पर अपना कार्य कर रही है, परन्तु सोचने का विषय यह है कि भारत में जो शिक्षा की अलख जली उसके पीछे किनका हाथ था या ये कहे कि वर्तमान में जिस शिक्षा के बेखूबी दौर से हम गुजर रहे है उसका प्रारम्भ कैसे हुआ। वर्तमान हिन्दुस्तान के स्वरूप को शदियों पहले सजाने वाले और आधुनिक भारतीय शिक्षा में अपना अहम योगदान देने वाले भारतीय भूमि पर जन्में असाधारण व्यक्तित्वों के योगदान में से सम्भव हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी की जो जागृति लहर थी वो आधुनिक भारतीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना थी, इस जागृति ने भारतीयों को आत्म–निरीक्षण करने के लिए विवश कर दिया।[1]

प्राचीन भारतीय शिक्षा को प्रखर रूप से प्रकट करने में कुछ यूरोपीय विद्वानों का भी योगदान रहा जो यहां की प्राचीन सांस्कृतिक उपलब्धियों से काफी प्रभावित रहे थे, जिन्होंने यहां भारतीय संस्कृति और सभ्यता की प्राचीन

शिक्षा पद्धति को पुनः जीवित करने का प्रयास किया जिससे भारतीयों में आत्म गौरव और आत्म सम्मान की भावना पैदा हुई। ऐसे विदेशी विद्वानों में विलियम जोंस का नाम अति महत्वपूर्ण है जिन्होंने 1784 ई. में कलकता में एशियाटिक सोसायटी की स्थापना की।[2] एक जाति द्वारा किसी उच्च जाति के रीति–रिवाज, तरीके और परम्पराओं को अपनाकर अपने स्तर को श्रेष्ठ करने का प्रयत्न करना शिक्षा के ज्ञान से ही सम्भव है, इस प्रकार की प्रक्रिया को एम.एन. श्री निवास ने संस्कृतिकरण कहा है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. भारतीय शिक्षा के माध्यम से सभ्यता और संस्कृति को जानने हेतु आवश्यक।
2. व्यक्तित्व निर्माण के लिए शिक्षा आवश्यक।
3. गुण–दोष के भेद को जानने के लिए शिक्षा जरूरी।
4. प्राचीन शिक्षा और आधुनिक शिक्षा के तुलनात्मक अध्ययन हेतु।
5. महान व्यक्तित्व की पहचान हेतु शिक्षा आवश्यक।

राजा राममोहन राय (1774–1833 ई.)

राजा साहेब को हिन्दुस्तान में अनेक नामों से पुकारा जाता है नवजागरण का अग्रदूत, सुधार आन्दोलनों का प्रवर्तक, आधुनिक भारत का पिता तथा नव प्रभात का तारा। मात्र 15 वर्ष की आयु में इन्होंने अपना एक लेख लिखा जो भारतीय मूर्तिपूजा की आलोचना से परिपूर्ण था, नेपाल जाकर इन्होंने बौद्ध दर्शन का ज्ञान प्राप्त किया, उपनिषदों, अरबी, फारसी और संस्कृत भाषा का अध्ययन किया, अंग्रेजी, फ्रेन्च, ग्रीक, लैटिन, जर्मन और हिब्रू भाषायें सीखी। अंग्रेजी का ज्ञान तो इन्हें इस कदर था कि इसमें इन्होंने एक ऐसी लेखन शैली विकसित की जिसकी प्रशंसा करते हुए एक अंग्रेज अधिकारी बेन्थम ने कहा था कि ''इस शैली के साथ एक हिन्दु का नाम न जुड़ा होता तो हम यह समझते कि यह बहुत ही उच्च शिक्षित अंग्रेजी कलम से निकली है।'' राजा साहेब कुरान, बाइबिल और हिन्दुओं के धर्मशास्त्रों के ज्ञाता थे। इनका पहला ग्रन्थ फारसी में था उसका नाम तोहफत–उल–मुहदीन था। इसमें इन्होंने मूर्ति पूजा का विरोध किया। 20 अगस्त, 1928 को इन्होंने ब्रह्म सभा की स्थापना की जो आगे चलकर ब्रह्म समाज कहलाया इसके पीछे उनका उद्देश्य गुलामी की जंजीरों में जकड़े या परम्पराओं के बन्धनों में गलित हो रहे मानव जीवन को नैतिक शिक्षा के बल पर ऊपर उठाना था।[3]

राजा राममोहन राय ने भारतीय समाज में शिक्षा की एक ऐसी चेतना आरम्भ की जो ऐसी पुरानी परम्पराओं तथा मान्यताओं को त्याग करने के संदेश दे रही थी जो एक मानव को जाति, वर्ग भेद या धर्म के आधार पर अमानवीय व्यवहार करने को बाध्य करती है। राजा साहेब की शिक्षा यहां के लोगों में समानता की भावना पैदा करना चाहती थी जैसे स्त्री–पुरूष एक समान है सतीप्रथा और विधवा का कष्टदायी जीवन आदि समाज के लिये अभिशाप है उनका कहना था कि औरत जाति की प्रतिष्ठा तथा मान–मर्यादा को बढ़ावा मिलना चाहिए अपने प्रयासों से इन्होंने 1829 ई. में सती प्रथा पर प्रतिबन्ध लगवाया। वे पत्रकारिता के भी अग्रदूत थे संवाद कौमुदी, मिरात–उल–अखबार और अंग्रेजी में ब्रह्मनिकल मैगजीन निकाली। सबसे पहले शिक्षा का पाठ हमें राजा साहेब ने ही सिखाया जो वर्तमान में हमारी जीवन शैली को आधुनिकता के बोध से परिपूर्ण करती है साथ ही साथ परिश्चमी संस्कृति के अच्छे प्रभावों को ग्रहण करने की शिक्षा प्रदान करती है क्योंकि राजा साहेब पाश्चात्यकरण के हितेषी थे।[4] मगर ये बात अलग है कि जब वो इंग्लैण्ड गये तब अपने साथ एक भारतीय रसोईये को लेकर गये, ताकि वहां के रसोईयों के हाथों का बना भोजन न करना पड़े।

भारत के मार्टिन लूथर स्वामी दयानन्द सरस्वती (1824–1883)

स्वामी जी के बचपन का नाम मूलशंकर था 21 वर्ष की अवस्था में इन्होंने गृह त्याग दिया और अपने अन्धे गुरू स्वामी बिरजानन्द से शिक्षा ग्रहण की इन्होनें 1875 ई. में बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की। स्वामी जी ने वेद भाष्य, वेदभाष्य भूमिका नामक पुस्तकें लिखी। इन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया 1874 में सत्यार्थ प्रकाश प्रकाशित किया और इसकी रचना केशव चन्द्र सेन की प्रेरणा से हिन्दी भाषा में की। स्वराज्य शब्द और स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करने की पहल की। वेदों की ओर लोटों, भारत भारतीयों के लिये नामक नारे भी दिये अपनी प्रखर शिक्षा के बल पर शुद्धि आन्दोलन का आरम्भ किया। स्वामी जी की शिक्षा अलख से उनके जाने के बाद भारत देश में 1886 ई. में दयानन्द एंग्लो–वैदिक कॉलेज की स्थापना हुई।[5] वर्तमान में स्वामी जी के नाम पर अनेक डी.ए.वी. संस्थाएं, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय सफलतापूर्वक संचालित है। वर्तमान समय को देखते हुये यहां ज्ञान–विज्ञान और नवीन तकनीकी तथा नैतिक शिक्षा से छात्रों को लाभप्रद किया जाता है। शिक्षा के विषय में स्वामी जी ने कहा है कि ''समग्र शिक्षा के उद्देश्य की सफलता 'मातृमान, पितृमानचार्यवान् पुरूषोंवेद'' के संदेश को आमुख रखते हुए माता–पिता एवं आचार्य के सम्मिलित प्रयत्न से ही सम्भव है। अतः प्रत्येक गृहस्थ बालक की प्राथमिक निर्माणशाला है। इस हेतु 'माता निर्माता भवति' के सिद्धान्त को स्वीकार करते हुये नारी शिक्षा पर बल दिया जाना चाहिए।'' स्वामी जी उपनिषदों, वेदों के ज्ञान के साथ ही साथ विद्या–विज्ञान, अर्थशास्त्र, गणित, आध्यात्मविज्ञान, रसायन, आयुर्वेद, संगीत और राजनीति विषय सम्बन्धी ज्ञान को मनुष्य के लिये आवश्यक मानते थे। स्वामी जी ने अपने प्रस्तुतीकरण में प्रकाश डाला और बताया कि शिक्षा पद्धति और शिक्षा संस्था, गुरू–शिष्य सम्बन्ध कैसे हो उनका कहना था कि शिक्षा–संस्थान नगरीय जीवन से दूर प्रकृति के आँचल में बनाने चाहिए क्योंकि इससे शिक्षा ग्रहण करने वाला मानव शारीरिक और मानसिक तौर पर निरोग और बलिष्ठ रहता है। शिष्य और गुरू के सम्बन्ध पर प्रकाश डालते हुए इन्होंने कहा कि ये रिश्ता तो गर्भावस्था में बच्चे को अपनी माँ से तथा माँ का बच्चे से के समान होता है। इन्होंने ऐसे नाटक, उपन्यास आदि पढ़ने पर रोक लगाई जिनसे कामोत्तेजक भावना उत्पन्न होती हो वे बच्चों में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार की शिक्षा के ठहराव के पक्ष में थे स्वामी जी नारी शिक्षा के हितैषी थे इनका कहना था

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* (Part-1) October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

कि नारी समाज, वर्ग और देश की आधारशिला होती है इसलिये नारी का शिक्षित होना बहुत जरूरी है उपरोक्त बातों का विश्लेषण किया जाये तो हम पाते है कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली सदैव स्वामी जी की ऋणी रहेगी।[6] मगर स्वामी जी वर्ण व्यवस्था के समर्थक थे।

मुंशीराम उर्फ स्वामी श्रद्धानन्द

श्रद्धानन्द जी स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रशस्त सेनानी थे। श्रद्धानन्द ने 1902 ई. में हरिद्वार के निकट कांगड़ी में बड़े ही श्रद्धा भाव से स्वामी दयानन्द सरस्वती के स्वप्न को पुरा करते हुये गुरूकुल विश्वविद्यालय की नींव रखी। श्रद्धानन्द जी ने हमेशा से ही अपने देश के युवाओं को भारतीय साहित्य पढ़ने हेतु प्रेरित किया, ताकि युवा वर्ग में देश भक्ति की भावना जागृत हो सके। [7]

विविदिशानन्द उर्फ स्वामी विवेकानन्द (1863–1902)

बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था 1893 ई. में स्वामी जी अमेरिका के शिकागों में आयोजित प्रथम विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेने के लिए गए इन्होंने अपने भाषण के माध्यम से पूरे विश्व में प्रसिद्धि पाई। इनके प्रभावशाली भाषणों से प्रभावित होकर न्यूयार्क हैराल्ड ने लिखा कि ''विवेकानन्द निश्चित रूप से विश्व धर्म संसद में सबसे प्रमुख व्यक्तित्व है उन्हें सुनकर हम यह अनुभव करते है कि इस विद्या से सम्पन्न देश में ईसाई प्रचारक भेजना बड़ी बेवकूफी है।'' पश्चिम के लोगों ने स्वामी जी को तुफानी भ्रमण करने वाला साधु कहा। न्युयार्क क्रिटिक ने कहा कि ''वे ईश्वरीय शक्ति प्राप्त वक्ता है उनके सत्य वचनों की तुलना में उनका सुन्दर बुद्धिमतापूर्ण चेहरा पीले और नारंगी वस्त्रों से लिपटा हुआ कम आकर्षक नहीं।'' स्वामी जी का कहना था कि जब तक देश के लाखों लोग भूखे, अज्ञानी है, मैं ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को देश द्रोही मानता हूँ जिसने उनकी मेहनत की कमाई से शिक्षा तो ग्रहण की, परन्तु वे अब उनकी परवाह नहीं करते। वे महिलाओं की शक्ति के बारे में पूर्ण आश्वस्त थे इन्होंने कहा कि यदि मुझे 500 समर्पित पुरूष मिल जाए तो मुझे मेरे देश को सुधारने में 50 वर्ष लगेगें, मगर यदि 50 समर्पित महिलाएं मिल जाएं तो इस कार्य को मैं कुछ ही वर्षों में सम्पन्न कर सकता हूँ। इन्होंने विचारों में कहा कि विभिन्न विचारों के वाद–विवाद से कुछ नए विचार निकलते है। ये पैरिस में 1900 ई. में आयोजित द्वितीय विश्व धर्म सम्मेलन में भी गये सुभाषचन्द्र बोस ने स्वामी जी को आधुनिक राष्ट्रीय आन्दोलन का आध्यात्मिक पिता कहा क्योंकि स्वामी जी दरिद्र नारायण की सेवा को सबसे बड़ी ईश्वर की सेवा मानते थे। स्वामी जी शिक्षा के उस रूप को मान्यता देते थे जो व्यक्ति के मस्तिष्क को बोझिल न करते हुए उसमें ऐसी रूचि और उत्साह उत्पन्न करें जो उसके जीवन–निर्माण में सहायक सिद्ध हो। स्वामी जी की शिक्षा का ध्येय मानव मात्र की समता, एकता और बंधुता का भाव जागृत करना है।[8] मगर विवेकानन्द स्वामी मूर्ति पूजा, बहुदेववाद आदि का समर्थन करते थे।

बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर

इनका जन्म 14 अप्रेल, 1891 महू, सेन्ट्रल प्रोविंस, ब्रिटिश भारत वर्तमान मध्य प्रदेश में हुआ था। इन्हें महान बोधिसत्व के नाम से भी जाना जाता है बाबा साहेब ने शिक्षा के क्षेत्र में एम.ए., पी.एच.डी., डी.एससी., एल.एल. डी., डी.लिट., और बैरिस्टर एट लॉ की उपाधियां प्राप्त की इन्होंने अपनी शिक्षा मुम्बई, कोलम्बिया, लन्दन और लन्दन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स, लन्दन से प्राप्त की इन्होंने भारत में समता सैनिक दल, स्वतन्त्र लेबर पार्टी, अनुसूचित जाति फेडरेशन और भारत की बौद्ध सोसायटी नामक संस्था स्थापित की। ये भारत में भारत के प्रथम कानून मन्त्री, संविधान मसौदा समिति के अध्यक्ष के रूप में पहचाने जाते है राजनीतिक पार्टी के रूप में इन्होंने भारतीय रिपब्लिकन पार्टी बनाई इनकी प्रथम पत्नी का नाम रामा बाई अम्बेडकर और दुसरी पत्नी का नाम डॉ. सविता अम्बेडकर था जो एक ब्राह्मण लड़की थी। पहले ये हिन्दू थे मगर हिन्दू समाज में बराबर का दर्जा न मिलने के कारण 1956 में नागपुर में पांच लाख अनुयायीयों के साथ बौद्ध धर्म ग्रहण किया इन्हें महापरिनिर्वाण के बाद 1990 में भारत रत्न पुरस्कार प्रदान किया गया। इन्होंने अपनी शिक्षा के माध्यम से भारतीय समाज में ज्ञान की ज्योति जलाई निम्न तकबे को अधिकार दिलाने हेतु अपना सारा जीवन लगा दिया ये महिला उत्थान के हितेषी थे। बाबा साहेब ने संविधान के अनुच्छेद 17 द्वारा अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया। 1955 ई. में इनके सहयोग से संसद ने अस्पृश्यता अधिनियम पास किया। इस अस्पृश्यता रूपी बीमारी को जड़ से नष्ट करने का बीड़ा उठाने वाले अम्बेडकर थे शिक्षा के ज्ञान रूपी दीपक से इस बीमारी को नष्ट करना अति आवश्यक है।[9]

श्री अरविन्द

ये समकालीन भारत के एक शिक्षा दार्शनिक थे। इन्होंने शिक्षा के लक्ष्य और उनके मौलिक सिद्धान्तों, पर मानव के मनोविज्ञान का विश्लेषण किया। अरविन्द ने विभिन्न प्रकार की शिक्षाएं जैसे :– ऐन्द्रिय शिक्षा, नैतिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा, कला शिक्षा, संगीत की शिक्षा तथा धार्मिक शिक्षा इत्यादि के बारे में गहन चिन्तन प्रस्तुत किया। श्री अरविन्द द्वारा बतलाई गई शिक्षा व्यवस्था न केवल मनुष्य के विकास क्रम में सहायक सिद्ध होती है वरन् वर्तमान शिक्षकों, विद्वानों की समस्याओं की पूर्ति भी करती है। डॉ. रामनाथ शर्मा ने अपना मत देते हुये कहा है कि ''आज भारत के शिक्षा के क्षैत्र में विचारकों और शिक्षकों के सामने जब अनेक समस्याएं भयंकर रूप में उपस्थित है तो इन समस्याओं के मूल कारणों को खोजने में श्री अरविन्द के शिक्षा–दर्शन से सहायता ली जा सकती है, क्योंकि अन्य क्षैत्रों के समान शिक्षा के क्षैत्र में भी उन्होंने व्यापकता और गहराई दोनों ही दृष्टि से सत्यों की खोज की है इसलिए उनका शिक्षा दर्शन केवल समकालीन भारतीय शिक्षा दर्शन में ही नहीं अपितू विश्व के शिक्षा दर्शन में भी विशिष्ट स्थान रखता है उसके आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की नींव रखी जा सकती है।'' अरविन्द की शिक्षा नीति आधुनिक भारतीय शिक्षा पद्धति के लिये अत्यधिक उपयोगी है।[10]

दादा भाई नौरोजी

इन्होंने ने ईस्ट इण्डिया एसोसिएशन की स्थापना 1 दिसम्बर, 1866 ई. लन्दन में की इसका उद्देश्य ब्रिटिश जनता और संसद को भारतीय विषयों से अवगत कराना था। [11] नौरोजी ब्रिटिश संसद के पहले भारतीय थे जो ये

मानते थे कि किसी भी प्रकार शिक्षा का लाभ तभी होता है जब हम उस ग्रहण किये गये शिक्षा के ज्ञान को निःशुल्क आगे आने वाली पीढ़ियों को बाँटे। इनका मानना था कि हर समुदाय के बच्चों के लिये शिक्षा अनिवार्य है, ताकि वो अपने जीवन को अच्छी प्रकार गुजारे और गांव, शहर, देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों की पहचान कर पाये। वे नारी शिक्षा के समर्थक थे वे स्वयं के बारे में कहते है कि ''मैंने यह अनुभव किया है कि मेरी शिक्षा निर्धनों की कीमत पर हुई है मैं स्वयं भी निर्धन हूँ मेरे मस्तिष्क में यह विचार विकसित हुआ है कि चूंकि मेरी शिक्षा तथा अन्य लाभ मुझे जनता द्वारा प्राप्त हुए है। अतः मुझे उनको यह सब वापस करना होगा। मुझे अपने सामर्थ्य के अनुसार जनता की सेवा में समर्पित होना होगा।'' [12]

निष्कर्ष

उपरोक्त शिक्षा की पृष्ठभूमि को सदियों से तैयार करके लाने वाले भारत के असाधारण व्यक्तित्वों का योगदान ही हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली, आधुनिक जीवन शैली और निर्माणशील सोच संपदा का पूर्णरूपेण ध्येय प्रस्तुत करती है। भारत भूमि पर पैदा हुये असाधारण व्यक्तियों के धनी शिक्षित यौद्धाओं ने यहां पर शिक्षा रूपी दीपक से भारत में फैली अनेक बुराईयों का अन्त किया और भारत को विश्व में अहम् स्थान दिलाया। उपरोक्त व्यक्तित्वों के अलावा भी भारत में बहुत सी ऐसी और विभूतियाँ रही है जैसे – सरदार पटेल, न्यायमूर्ति मेहरचन्द महाजन, आधुनिक ऋषि, महादेव गोविन्द रानाडे, सुमन्त मुगलांवकर, बाल गंगाधर तिलक तथा रामनाथ गोयनका जिन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में अपने महान विचारों से समाज व राष्ट्र को सुरक्षा तथा साक्षरता प्रदान की हम हमेशा से ही हमारे उन महान असाधारण व्यक्तित्वों के ऋणी रहेंगे जिन्होंने हमें अपने आपको जानने पहचानने का हुनर सिखाया।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *पाण्डे, एस.के. : आधुनिक भारत, पृ. सं. 185, प्रयाग एकेडमी पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2014*
2. *पाण्डे, एस.के. : आधुनिक भारत, पृ. सं. 185, प्रयाग एकेडमी पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2014*
3. *अग्निहोत्री, वी.के. : भारतीय इतिहास, पृ. सं. (स) 166, 167, 168, 169, 170 (सामाजिक एवं सांस्कृतिक जागरण) ऐलाइड पब्लिकेशन–2011*
4. *अग्निहोत्री, वी.के. : भारतीय इतिहास, पृ. सं. (स) 167, 168, 170 (सामाजिक एवं सांस्कृतिक जागरण) ऐलाइड पब्लिकेशन–2011*
5. *अग्निहोत्री, वी.के. : भारतीय इतिहास, पृ. सं. (स) 171, 172 (सामाजिक एवं सांस्कृतिक जागरण) ऐलाइड पब्लिकेशन–2011*
6. *महर्षि दयानन्द की साधना और सिद्धान्त : (गुरुकुल पत्रिका विशेषांक, नवम्बर 1986), जयदेव वेदलंकार (प्रस्तुतकर्ता)*
7. *हरिद्वार : गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, पृ. सं. 5, 130, 131*
8. *स्वामी विवेकानन्द, कर्मयोग, (नागपुर : रामकृष्ण मठ, प्रथम संस्करण) पृ. सं. 2*
9. *पाण्डे, एस.के. : आधुनिक भारत, पृ. सं. 211, 483*
10. *शर्मा, रामनाथ : राष्ट्रधर्म दृस्टा श्री अरविन्द, (मेरठ : विनीत प्रकाशन, 1980) पृ. सं. 89*
11. *पाण्डे, एस.के. : आधुनिक भारत, पृ. सं. 301*
12. *नानी पालखीवाला, हम हिन्दुस्तानी, (दिल्ली : राजपाल एण्ड सन्ज) पृ. सं. 96, 97*